26 अक्टूबर 2019, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 38, अंक 4, कुल पृष्ठ 36

ISSN 2454-5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

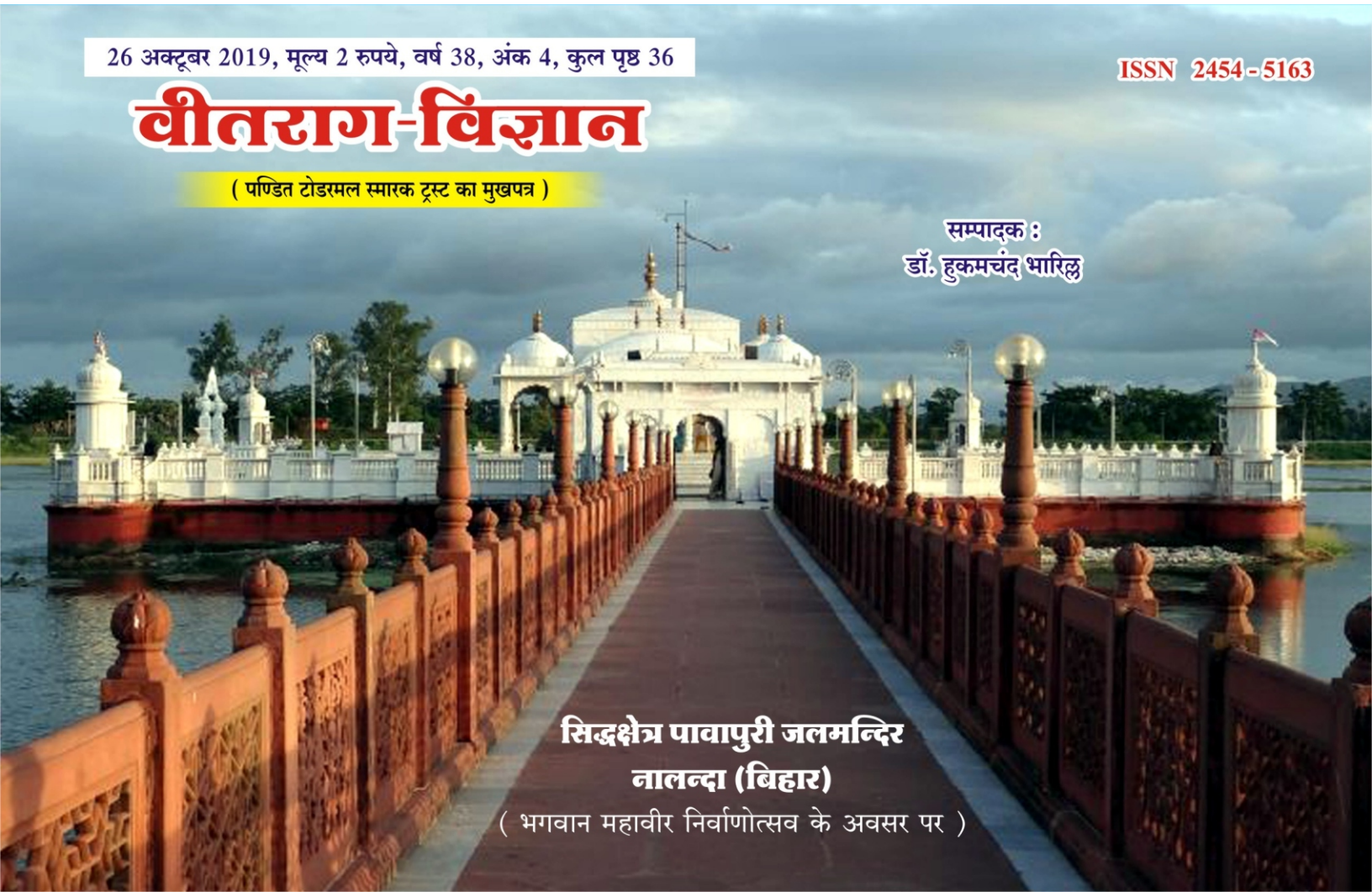

सिद्धक्षेत्र पावापुरी जलमन्दिर
नालन्दा (बिहार)
(भगवान महावीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर)

वीतराग-विज्ञान (435)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	10200

ज्ञान का स्वभाव

यह ज्ञानरूप आत्मा बाह्य पदार्थों से तो भिन्न ही है और राग से भी वास्तव में भिन्न है; राग के साथ तन्मय होने का उसका स्वभाव नहीं है, ज्ञानादि के साथ तन्मय होने का ही उसका स्वभाव है। स्वसन्मुख हुआ ज्ञान आत्मा के साथ तन्मय होकर आत्मा को जानता है और राग को जानने वाला ज्ञान राग में तन्मय हुए बिना ही उसे जानता है। ज्ञान यदि स्वसन्मुख होकर आत्मा में तन्मय न हो तो वह आत्मा को यथार्थरूप से नहीं जान सकता और यदि ज्ञान राग में तन्मय हो जाए तो वह राग को भी नहीं जान सकता; राग से भिन्न रहे तभी वह राग को जान सकता है। ज्ञान स्व को तो तन्मय होकर जानता है और पर को- रागादि को तन्मय हुए बिना ही जानता है - ऐसा ही ज्ञान का स्वभाव है। ऐसे निर्मल ज्ञानरूप कार्य को प्राप्त करके, उसमें तन्मय होकर आत्मा स्वयं अपने कर्मरूप होता है - ऐसी उसकी कर्मशक्ति है। - आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 507

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 38 (वीर नि. संवत् - 2545) 435 अंक : 4

हमकौं कछू भय...

हमकौं कछू भय ना रे, जान लियौ संसार।।
जो निगोद में सो ही मुझ में, सो ही मोख मंझार।
निश्चय भेद कछू भी नाहीं, भेद गिनै संसार।।
हमकौं कछू भय... ।।1।।

परवश ह्वै आपा विसारि कैं, रागदोष कौं धार।
जीवत-मरत अनादि काल तैं, यौं ही है उरझार।।
हमकौं कछू भय... ।।2।।

जाकरि जैसै जाहि समय में, जो होतब जा द्वार।
सो बनिहै टरिहै कछु नाहीं, करि लीनों निरधार।।
हमकौं कछू भय... ।।3।।

अगनि जरावै पानी बोबै, बिछुरत मिलत अपार।
सो पुद्गल रूपी मैं 'बुधजन', सबकौं जाननहार।।
हमकौं कछू भय... ।।4।।

- कविवर पण्डित बुधजनजी

आत्मार्थी बन्धुओं से ...

आत्मसाधना में जगत के विविध प्रतिकूल-अनुकूल संयोग तो बीच में आते ही हैं, यह कोई आश्चर्य नहीं है; किन्तु ऐसे समय पर अपनी आत्मार्थिता के बल से अपनी सर्वशक्ति को उपयोग में लेकर अपनी आत्मसाधना में अडिग रहना, अखण्ड रूप से उसे बनाये रखकर उसमें दृढता से आगे बढना ही कर्तव्य है।

आत्मार्थिता - यही एक ऐसा महान बल है कि जिसके समक्ष जगत का कोई बल नहीं चल सकता। जगत का कोई बल आत्मार्थी को उसके मार्ग से च्युत नहीं कर सकता। सचमुच आत्मार्थी को जगत में कोई विघ्न है ही नहीं।

तथापि, हे जीव! तुझे उलझन हो तो पूर्वकालीन महापुरुषों के जीवन को याद कर। उन साधक संतों ने कैसे-कैसे प्रसंगों में भी अपनी आराधना बनाये रखी है। उनका स्मरण करके उनके उदाहरण से अपने आत्मा को भी आराधना में उत्साहित कर।

आत्मार्थी के परिणाम उल्लसित होते हैं; क्योंकि आत्मस्वभाव को साधकर उसे अल्पकाल में संसार से मुक्त होकर सिद्ध होना है। इसलिये उसे निरन्तर अपनी मुक्ति का उल्लास होता है और इसी कारण वह उल्लसित वीर्यवान होता है। पूर्वकाल में जिसे कभी नहीं साध पाया, ऐसे अपने सम्यग्दर्शनादि कार्य को साधने के लिये आत्मार्थी का हृदय निरन्तर उत्साहित होता है।

- आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी

(वीतराग-विज्ञान, अक्टूबर-1984, पृष्ठ 32)

दो तरह के भगवान

- डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

(दोहा)

निज आतम का स्मरण नमन करूँ अरहंत।
निज आतम के रमण से आवे भव का अन्त।।१।।

(वीर)

हे भव्य! सुनो भगवान दो तरह के होते जगतीतल में।
पहले रहते जिनमन्दिर में दूजे रहते तनमन्दिर में।।
पहले पर हैं, दूजे हैं निज; पहले पर्यायरूप भगवन।
दूजे द्रव्यरूप जिनको कहते हैं कारणपरमातम।। २ ।।

अरे आज तक मुक्ति गये जो वे हैं सभी सिद्ध भगवान।
उनकी ही अरहंत दशा की जिन प्रतिमाओं का निर्माण।।
और प्रतिष्ठित होकर वे सब बनती हैं जिनदेव महान।
जिनमन्दिर में राजित होकर वे ही बनती हैं भगवान।। ३ ।।

उनकी पूजन भक्ति भाव से जो करते उन भव्यों को।
अरे सातिशय पुण्यबंध होता है जिनवर भक्तों को।।
सामान्य पुण्य से सब लौकिक सुविधायें तो मिल जाती हैं।
ए.सी. बंगले ए.सी. मोटर सब सुविधायें जुट जाती हैं।। ४ ।।

ए.सी. जैसी सुविधायें तो बिल्ली-कुत्तों को मिल जातीं।
हम से भी अच्छी सुविधायें उनको भी तो हैं जुट जातीं।।
उनको तो ये सब सुविधायें बिन श्रम के ही हैं मिल जाती।
हमको श्रम करने पर ही तो ये सब सुविधायें जुट पातीं।। ५।।

हम स्वयं जुटाते हैं तब ही मिलती हैं ये सब सुविधायें।
कुत्ते-बिल्ली कुछ करें नहीं फिर भी मिलतीं ये सुविधायें।।
पर मुक्तिमार्ग में उपयोगी साधन तो प्राप्त नहीं होते।
अरे सातिशय पुण्योदय से ही वे हमें प्राप्त होते।। ६।।

देव-शास्त्र-गुरु का अर्चन अर जिनवाणी का श्रवण-मनन।
और देशना की लब्धि निज आतम का होता चिन्तन।।
निज आतम का होता चिन्तन साधर्मीजन का सहज मिलन।
सत्गुरुओं का सत्संग और होते प्रतिदिन जिनवर दर्शन।। ७।।

अरे सातिशय पुण्य बंधे जिनप्रतिमाओं के अर्चन से।
अर सब सुविधायें मिलें हमें जिनदर्शन से जिनपूजन से।।
भले सातिशय पुण्य बंधे पर उससे कर्म नहीं कटते।
स्वर्गसंपदा भले मिले पर हम भगवान नहीं बनते।। ८।।

हम भगवान नहीं बनते न हमको मुक्ति मिलती है।
भव के सब भोग मिलें लेकिन कर्मों से मुक्ति न मिलती है।।
कर्मों से मुक्ति न मिलती है पर कर्मबंध ही होता है।
कर्मों के बंधन से भाई भव-भव में रुलना होता है।। ९।।

यदि भगवान तुम्हें बनना निज को देखो निज को जानो।
निज में ही जमकर रम जावो अर नित ही निज को तुम ध्यावो।।
अपने में ही अपनेपन से अपने में जमने-रमने से।
कर्मों से मुक्ति मिलती है निज में अपनापन करने से।।१०।।

निज में अपनापन करने से निज में सर्वस्व समर्पण से।
रे ज्ञान-ध्यान-श्रद्धान - सभी अपने में अर्पण करने से।।
अपना ही आतमराम रहे जो इस शरीर के मन्दिर में।
वह ही दूजा भगवान मुक्ति का कारण जो इस भूतल में।। ११।।

(रेखता)

अरे कारण परमातम रूप कहा जो अपना आतमराम।
यही है ज्ञान ध्यान का ध्येय यही है रे दूजा भगवान।।
इसी के आराधन से प्रभो! बने हम पर्यय में भगवान।
यही है मेरा असली रूप यही मेरी असली पहिचान।। १२।।

अरे मैं ही मेरा भगवान ज्ञान-दर्शन से हूँ परिपूर्ण।
अनन्तानन्त गुणों का पिण्ड चण्ड सर्वांग और सम्पूर्ण।।
सभी परद्रव्यों से मैं पृथक् और अपने में ही परिपूर्ण।
नहीं है मुझमें कोई कमी अरे मैं स्वयं स्वयं में पूर्ण।। १३ ।।

देह में रहूँ देह से भिन्न देह जड़ मैं चेतन सर्वांग।
देह में ज्ञान नहीं है रंच ज्ञान का केतन[१] मैं सर्वांग।।
शान्ति का सागर सहजानन्द ज्ञान का पिण्ड और सुखकंद।
परम आनन्द सहज आनन्द अरे आनन्द और आनन्द।। १४ ।।

अरे सम्यक् श्रद्धा का प्रभो कहा जो एकमात्र श्रद्धेय।
अरे रे परमशुद्धनिश्चयनय का जो एकमात्र है ज्ञेय।।
अरे रे श्रद्धा का श्रद्धेय, ज्ञान का ज्ञेय ध्यान का ध्येय।
वही है मेरा आतमराम वही है एकमात्र आदेय।। १५ ।।

१. घर

यही है एकमात्र आदेय यही है एकमात्र श्रद्धेय।
यही है मंगल उत्तम शरण यही है धर्मध्यान का ध्येय।।
अरे यह ही आनन्द स्वरूप यही कारणपरमातम रूप।
यही है परमभाव का रूप यही है अद्‌भुत और अनूप।। १६।।

हमारा मन पापों से बचे इसलिये जिनमन्दिर में जाँय।
और सामान्य पुण्य से बचें क्योंकि वह भोगों में उलझाय।।
यदी भोगों में तुम उलझे तो उससे होय पाप का बंध।
भोग से बचो, पाप मत करो और तुम हो जावो निर्बन्ध।। १७।।

अरे मिथ्यात्वभाव को तजो और तुम पुण्य-पाप से बचो ।
निरन्तर अपने में ही रमो और अपने आतम को भजो।।
एक वह ही भजने के योग्य एक वह ही रमने के योग्य।।
उसी से प्रकटे आतमधर्म उसी से कटते हैं सब कर्म।। १८।।

तुम्हारा आतम है भगवान करो उस आतम का श्रद्धान।
करो तुम उस आतम का ज्ञान करो तुम उस आतम का ध्यान।।
अरे इतना करने से आप बनेंगे पर्यय में भगवान।
यही है एकमात्र कर्त्तव्य यही है अद्‌भुत कार्य महान।। १९।।

(दोहा)

निज आतम भगवान की महिमा अपरंपार।
निज आतम के ध्यान से हो आनन्द अपार।। २०।।
यह ही निश्चय ध्यान है सम्यग्दर्शन ज्ञान।
निश्चय रत्नत्रय यही यह ही धर्म महान।। २१।।

-●-

सम्पादकीय

योगसार अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

योगसार दोहा १३

विगत दोहों में यह कहा था कि देहादि परपदार्थों में अपनापन अज्ञान है, मिथ्यात्व है और अपने आत्मा में अपनापन सम्यक्त्व है।

अब इस १३वें दोहे में यह कहा जा रहा है कि आत्मा को जानकरयदि इच्छा रहित तप करेगा तो उस तप से परमगति की प्राप्ति होगी।

दोहा मूलतः इसप्रकार है -

इच्छा-रहियउ तव करहि, अप्पा अप्पु मुणेहि।
तो लहु पावहि परम-गई, फुडु संसारु ण एहि।। १३।।

(हरिगीत)

आतमा को जानकर इच्छारहित यदि तप करे।
तो परमगति को प्राप्त हो संसार में घूमे नहीं।। १३।।

हे आत्मा! यदि तू आत्मा के अनुभवपूर्वक इच्छाओं के अभाव रूप तप करेगा तो परमगति को प्राप्त करेगा। तेरे भवभ्रमण का अन्त आ जावेगा।

उक्त दोहा में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा है कि सभी प्रकार की इच्छाओं का निरोध तप है तथा तप से मुक्ति की प्राप्ति होती है।

ध्यान रहे इच्छाओं का निरोध आत्मज्ञान बिना नहीं होता, आत्मानुभव के बिना नहीं होता; अतः आत्मानुभवपूर्वक इच्छानिरोधरूप तप की भावना करना चाहिये।

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी उक्त दोहा का भाव इसप्रकार स्पष्ट करते हैं -

''अशुभ भाव हों तो पाप होता है, दया-दान आदि के शुभभाव हों तो पुण्य होता है; परन्तु धर्म नहीं होता। चिदानन्द स्वरूप आनन्दमूर्ति भगवान आत्मा के भान बिना अकेले उपवास करे, उसमें भी राग की मंदता हो तो मिथ्यात्व सहित पुण्य बांधता है; परन्तु उसे धर्म कहने में नहीं आता। उससे जन्म-मरण का अन्त नहीं होता।

आत्मा अपने वीतरागी, निर्दोष, अकषाय स्वरूप को जानकर उसमें लीन हो तो इच्छारहित तप होता है। उससे जन्म-मरण का अन्त आता है।[१]

तुम्हारा नाम जानना है तो कितने उपवास करें कि जिससे तुम्हारा नाम जाना जाये? मुझे तुम्हारा नाम पूछना नहीं, उपवास करके तुम्हारा नाम जान लेना है। यह कैसे संभव है? तुम्हारा नाम और धाम क्या है? ज्ञान द्वारा ही अज्ञान का नाश हो सकता है। इसलिए पहले आत्मज्ञान करे। ज्ञाता-दृष्टा वह आत्मा - ऐसा आत्मा का विश्वास अर्थात् श्रद्धा-ज्ञान करे। पीछे राग से हटकर स्वरूप में स्थिर हो तो ही तप होता है।[२]''

लोक में भी हमें किसी का परिचय प्राप्त करना हो तो सबसे पहले हम उसके बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। उससे या उसे जानने वाले अन्य पुरुष से उसका नाम, ग्राम आदि के बारे में पूछते हैं; उपवास करने नहीं बैठ जाते और न ऐसा मानते हैं कि उपवास रूप तप करने से उसके बारे में सब पता चल जावेगा। परन्तु धर्म के बारे में हम इसप्रकार का विवेक नहीं रखते।

आखिर हम अपने आत्मा को सुखी बनाने के लिये ही तो धर्म करते हैं, उपवासादि तप करते हैं। यदि यह सत्य है तो क्या हमें उस आत्मा के बारे में सच्ची जानकारी नहीं करना चाहिये?

१. योगसार प्रवचन पृष्ठ-२०
२. वही, पृष्ठ-२०

करना चाहिये, अवश्य करना चाहिये। वह जानकारी हमें आगम से प्राप्त होगी, परमागम से प्राप्त होगी; उसके जानकार विद्वानों से होगी, सन्तों से होगी। तदर्थ हमें जिनवाणी का स्वाध्याय करना चाहिये, विद्वानों और सन्तों का समागम करना चाहिये। पर हम तो यह समझते हैं उपवास रूप तप करेंगे तो सब हो जायेगा, पर ऐसा होनेवाला नहीं है।

स्वामीजी भी हमें यही समझाना चाहते हैं।

इस गाथा में भी यही कहा गया है कि आत्मज्ञानपूर्वक, अपने आत्मा के अनुभवपूर्वक यदि हम इच्छाओं के निरोधरूप तप करेंगे तो हमें परमपद की प्राप्ति होगी, मुक्ति की प्राप्ति होगी।

बारह तपों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण तप, ध्यान नामक बारहवाँ तप है। यदि हम आत्मज्ञानपूर्वक लगातार अन्तर्मुहूर्त तक आत्मध्यान करें तो चार घातियाँ कर्मों का अभाव होकर केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाती है, अनन्त अतीन्द्रिय आनन्द की, सुख की प्राप्ति हो जाती है।

ध्यान के अतिरिक्त दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण तप स्वाध्याय है; क्योंकि सत्शास्त्रों के स्वाध्याय से ही आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है।

अतः जिनवाणी में ज्ञान और ध्यान, आत्मज्ञान और आत्मध्यान के सर्वाधिक गीत गाये हैं। आत्मार्थी भाई-बहिनों का परम कर्त्तव्य है कि वे अपने जीवन को ज्ञान और ध्यान में लगावें अर्थात् आत्मा के ज्ञान में लगावें, आत्मा के ध्यान में लगावें। **(क्रमशः)**

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com
ये सभी प्रवचन सामग्री अब vitragvani एप पर भी उपलब्ध है।

छहढाला प्रवचन

एकत्व भावना

शुभ-अशुभ करमफल जेते, भोगे जिय एकहि तेते।
सुत-दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी।।६।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की पांचवीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

पुण्य-पाप रहित चैतन्य स्वभाव में आत्मा का एकत्व शोभित होता है, उसमें अन्तर्मुख परिणति की एकता ही परमार्थ एकत्व भावना है। उस एकत्व में शुभाशुभ राग या कर्मफल का भोग नहीं है, उसमें तो अपूर्व वीतरागी आनन्द का ही अनुभव है। आत्मा अकेले ही अपने ज्ञानानन्द को भोगता है। यहाँ आत्मा को अकेला ही कर्मफल का भोक्ता कहा है - यह व्यवहार एकत्व की बात है। शुद्ध आत्मा के एकत्व की भावना से शुभाशुभ कर्मफल का भोक्तापना भी छूट जाता है।

संसार में सभी स्वार्थ के सगे हैं। जब तक स्वार्थ सिद्ध होता है, तभी तक वे राग करते हैं और स्वार्थ पूरा होने के बाद सामने भी नहीं देखते।

यदि कदाचित् सामने भी देखें, राग भी करें तो भी दूसरा कोई जीव इस जीव के लिए क्या कर सकता है ?

देखो न ! कहाँ राम, कहाँ लक्ष्मण और कहाँ सीता? हजारों वर्षों तक साथ में रहे, अन्त में राम गए मोक्ष में, सीता गई स्वर्ग में, लक्ष्मण और रावण गये तीसरे नरक में। अहमिन्द्र हुए सीताजी के जीव को दया आई; अत: वह लक्ष्मण और रावण को धर्म सम्बोधन के लिए गया। वहाँ दोनों को प्रतिबोध कर बैरभाव छुड़ाया और धर्म प्राप्त कराया। फिर दयावश उन्हें नरक

के दु:खों से छुड़ाने के लिए उनके शरीर को उठाने लगा तो उनका शरीर पारे के समान बिखर गया। तब रावण और लक्ष्मण के जीव बोले हे देव, तुम दयालु हो; परन्तु हमारे कर्म यहाँ से बाहर नहीं निकलने देंगे। हमारे किए गये पाप-कर्मों का फल हमें ही भोगना पड़ेगा। उसमें दूसरा कोई क्या कर सकता है ? इसलिए हे देव! तुम अपने स्थान पर जाओ, यहाँ आकर हमें सम्बोधित करके तुमने बहुत उपकार किया है।

इस समय रावण नरक में है। भविष्य में वह जीव तीर्थंकर होगा और सीता का जीव उनका पुत्र होकर फिर उसी तीर्थंकर का गणधर होगा। लक्ष्मण का जीव भी भविष्य में तीर्थंकर होगा। इस संसार में कैसी विचित्रता है। यह जीव सदा अकेला है, इसे किसी और का सहारा नहीं है। बन्धमार्ग या मोक्षमार्ग में आत्मा अकेला ही परिणमता है। भगवान आत्मा राग-द्वेष, कर्म-नोकर्म से भिन्न और ज्ञानादि निज वैभव के साथ अन्तर में अपूर्व शान्ति प्रगट होती है और आत्मा स्वयं ही अकेला उस शान्ति का वेदन करता है।

संसार में भ्रमण करते हुए जीव को पुण्य और पाप दोनों में आकुलता है तथा उनका फल भोगने में आकुलता है, चैतन्य के वेदन में ही शान्ति है। आत्मा अकेला ही अपनी अशुद्ध या शुद्ध परिणति का कर्ता और भोक्ता है। एक जीव के भावों का फल दूसरे को नहीं मिलता।

एक साथ १०० मकान बने हों, उनमें यह जीव एक मकान को अपना मानकर कहता है कि 'यह मकान मेरा है'। मेरे भाई ! मकान तो १०० हैं, उनमें ९९ तेरे नहीं हैं तो एक तेरा कैसे हो गया ? एक मकान को अपना कहना तो तेरी ममता की कल्पना है। मकान तो ईंट चूने का है, तेरा तो ज्ञानस्वभाव है। जिसके साथ तेरी तन्मयता हो, वही तेरा कहा जा सकता है। तेरी तन्मयता ज्ञान और आनन्द के साथ है, इसलिए वे तेरे हैं, मकान या देहादि के साथ तेरी तन्मयता नहीं है, इसलिए वे तेरे नहीं हैं।

भाई ! आत्मा की यह बात बड़ी मीठी और मजे की है। भेदज्ञान द्वारा

आत्मा के ऐसे एकत्व को लक्ष में लेकर उसकी भावना तो कर।

जिसप्रकार जगत में अन्य शरीर इस आत्मा से भिन्न हैं; उसीप्रकार यह निकटवर्ती शरीर भी आत्मा से भिन्न ही है। जैसे अन्य शरीर के पुद्गल इस आत्मा से भिन्न, अचेतन हैं; उसीप्रकार इस शरीर के पुद्गल भी आत्मा से भिन्न और अचेतन हैं। यह जीव भ्रम से उन्हें अपना मानता है; परन्तु सर्वज्ञ भगवान जीव को सर्वदा उपयोग लक्षणवाला कहते हैं।

समयसार में कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने कहा है -

सर्वज्ञ ने देखा सदा उपयोग लक्षण जीव यह।
पुद्गलमयी हो किस तरह किस तरह तू अपना कहे।।२४१।।

यह सुनकर अज्ञानी जीव कहता है -

''और तो सब ठीक है; परन्तु आप कहते हैं कि शरीर भी आत्मा का नहीं है, तो हम क्या करें? कहाँ जायें?''

अरे भाई! कहाँ जाना है? अन्यत्र कहीं नहीं जाना है, तू अपने एकत्व स्वरूप को दृष्टि में लेकर उसमें स्थिर रह। अज्ञानी भी अपने आत्मा में से बाहर निकलकर शरीरादि परद्रव्यों में नहीं जाता, उसरूप नहीं होता; वह भी अपने ज्ञान या रागादि भावों में रहता है। ज्ञानी अपने ज्ञानमय भाव में एकत्व करके रहते हैं। अज्ञानी या ज्ञानी किसी का कार्यक्षेत्र अपने आत्मा से बाहर नहीं है, अपने में ही है।

एक वैरागी पुत्र दीक्षा लेने तैयार हुआ, तब उसकी माता कहती है -

''बेटा, वन जंगल में कुटुम्ब परिवार बिना अकेला-अकेला तू क्या करेगा? वहाँ तुझे अकेले कैसे सुहायेगा ?''

तब वह वैरागी पुत्र कहता है ''हे माता ! मैं वन जंगल में अकेला नहीं हूँ, वहाँ भी मेरे श्रद्धा, ज्ञान, शान्ति, आनन्द आदि अनन्त चैतन्यगुणों का

परिवार मेरे साथ है, उनके साथ गोष्ठी करने में मुझे महान आनन्द होगा।''

ज्ञानी जानते हैं कि हमारी चीज हमारे पास है, हमारे अन्तर में है। जो हमसे दूर हो, बाहर हो वह चीज हमारी नहीं है। जो हमारी चीज है, वह हमसे जुदा नहीं रह सकती। जिसका हमारे स्वभाव में एकत्व हो, वही हमारी चीज है। इसप्रकार ज्ञानी जीव क्रोधादि परभावों और शरीरादि परद्रव्यों को अपने स्वभाव में किंचित् नहीं मिलाते हुए, उनसे अत्यन्त भिन्न अपने चैतन्य के एकत्व स्वभाव की भावना भाते हैं अर्थात् उसे दृष्टि में लेकर उसमें एकाग्र होते हैं। ऐसी एकत्व भावना द्वारा परम आनन्द होता है और मोक्ष की साधना होती है।

इसप्रकार एकत्व भावना का वर्णन पूरा हुआ। **(क्रमशः)**

आशारूपी पिशाची से ग्रस्त प्राणी सदा कल्पना-लोक में विचरण करता रहता है, जीवन के ठोस धरातल पर उसके पैर नहीं टिकते। सामने खड़ी मौत भी उसके स्वप्नसंसार को भंग नहीं कर पाती है। आशारूपी डोरी से बंधा हुआ प्राणी सम्पूर्ण जीवन यों ही निकाल देता है। सफलता की संभावना के अभाव में भी इसकी आशा भग्न नहीं होती।

कहता है - आशा पर तो आसमान टिका है। यदि आशा समाप्त हो जाए तो जीवन का रस समाप्त हो जाए। सुख और शान्ति की आशा की पूर्ति जीवनभर न होने पर भी आशा लगाए ही रहता है। जहाँ आशा की सफलता की क्षीण-सी भी रेखा दिखाई न दे, वहाँ भी निराश नहीं होता।

- चिन्तन की गहराईयाँ, पृष्ठ 9

नियमसार प्रवचन –

आर्त और रौद्र ध्यान छोड़ने योग्य

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८९ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलत: इसप्रकार हैं –

मोत्तूण अट्टरुद्दं झाणं जो झादि धम्मसुक्कं वा।
सो पडिकमणं उच्चइ जिणवरणिद्दिट्ठसुत्तेसु ।।८९।।

(हरिगीत)

तज आर्त एवं रौद्र ध्यावे धरम एवं शुकल को।
परमार्थ से वह प्रतिक्रमण यह कहा जिनवर सूत्र में ।।८९।।

जो जीव आर्त और रौद्र – इन दो ध्यानों को छोड़कर धर्म या शुक्ल – ध्यान को ध्याता है; वह जीव जिनवरकथित सूत्रों में प्रतिक्रमण कहा जाता है।

(गतांक से आगे....)

(३) ज्ञानस्वभावी आत्मा का श्रद्धान-ज्ञान करके एकाग्रता करना धर्मध्यान है।

अपना आत्मा ज्ञायकस्वभावी है, पुण्य-पापरहित है। ऐसे अपने आत्मा के आश्रय से जो वीतरागी ध्यान प्रगट होता है, वह धर्मध्यान है। जितनी एकाग्रता है, वह शान्ति और मोक्ष का कारण है और जितना राग (व्रत का अथवा देव-गुरु-शास्त्र का) वर्त्तता है, उससे पुण्य बंधता है तथा उसके फल में स्वर्ग का सुख मिलता है। सम्यक्त्वी देवों की आयु सागरोपम की होती है। जैसे सागर में जल के बिन्दु अपार हैं, वैसे ही सागरोपम में वर्ष भी अपार हैं। नरक और पशुगति के दु:खों की अपेक्षा स्वर्ग के सुख को यहाँ सुख कहा है, वह वास्तव में सुख नहीं है।

(४) ध्यान और ध्येय के विकल्परहित शुद्ध आत्मा का विशेष ध्यान करना शुक्लध्यान हैं।

यह ध्यान धर्मध्यान की अपेक्षा विशेष एकाग्रतावाला है। 'मैं आत्मा ध्यान करनेवाला हूँ और परिपूर्ण शुद्ध अवस्था मेरा ध्येय है' – ऐसे ध्यान और ध्येय के विकल्प रहित शुक्लध्यान होता है। वह निजात्मा के लक्ष्य से होता है। पंचेन्द्रिय के लक्ष्य से भिन्न होकर शुद्ध चैतन्य स्वभाव की तरफ लक्ष्य करने पर निर्भेद परमकलासहित निश्चय शुक्लध्यान होता है।

इसप्रकार धर्मध्यान और शुक्लध्यान को ध्याकर जो भव्यपुरुष पारिणामिकभावनारूप से परिणमा है, जिसको निमित्त की अथवा निमित्त के अभाव की अपेक्षा नहीं – ऐसे स्वभावभाव में एकाग्रतारूप जिसका परिणमन है, वह निश्चय प्रतिक्रमणस्वरूप है। इसप्रकार देवाधिदेव श्री तीर्थंकर भगवान के मुखकमल में से निर्गत द्रव्यश्रुत में कहा है।

यहाँ इस काल में शुक्लध्यान नहीं है, धर्मध्यान है। साधकजीव एकावतारी होकर स्वर्ग में जावेगा, तथापि भान है कि निर्बलता के कारण अग्रिमभव धारण करना पड़ेगा। पुरुषार्थ में जितनी कचास रह गई, उसके कारण स्वर्ग मिला। राग का फल स्वर्ग है – ऐसा ज्ञानी जानता है। धर्मी जीव राग का स्वामी नहीं होता, वह तो उसका अभाव करके मनुष्य होकर केवलज्ञान प्राप्त करेगा।

प्रश्न :– शुक्लध्यान को सर्वदा उपादेय क्यों कहा?

उत्तर :– चार ध्यानों में से प्रथम के दो ध्यान – आर्त व रौद्र छोड़ने योग्य हैं; उनमें विकार की एकाग्रता है, जबकि धर्म और शुक्लध्यान में स्वभाव की एकाग्रता है। धर्मध्यान प्रथम भूमिका में उपादेय है और शुक्लध्यान सर्वदा उपादेय है। शुक्लध्यान भी यद्यपि पर्याय है, तथापि विकार का नाश करके मोक्ष प्रगट कराता है; अतः सर्वदा उपादेय कहा है, पर्याय अपेक्षा से उपादेय कहा है। वास्तव में देखा जावे तो धर्मी जीव को एक शुद्ध आत्मा ही उपादेय

है। दृष्टि तो किसी भेद या विकार को स्वीकारती ही नहीं; किन्तु धर्मध्यान और शुक्लध्यान की पर्यायें भी सम्यग्दर्शन का विषय नहीं हैं, क्योंकि वे दोनों ध्यान यद्यपि वीतरागी हैं; परन्तु हैं तो एक समय की पर्याय ही।

पर्याय के ऊपर लक्ष्य जाने से भेद पड़ता है और राग होता है, इसलिए अभेद द्रव्यस्वभाव की दृष्टि कराने के लिए शुक्लध्यान की पर्याय को गौण करके व्यवहार कहकर अभूतार्थ कहा है। भूतार्थ त्रिकाली स्वभाव में वह नहीं है; अतः दृष्टि के विषय में तो शुद्धस्वभाव एक ही उपादेय है; परन्तु यहाँ तो ध्यान के भेदों का ज्ञान कराना है, इसलिए आर्त और रौद्रध्यान से भिन्न करने के लिए वीतरागी पर्यायस्वरूप धर्मध्यान और शुक्लध्यान को उपादेय कहा है। शुक्लध्यान मोक्ष का निश्चित कारण है, इसलिए सर्वदा उपादेय कहा है - ऐसी अपेक्षा समझना।

इसीप्रकार (अन्यत्र श्लोक द्वारा) कहा है कि -

(अनुष्टुभ्)

निष्क्रियं करणातीतं ध्यानध्येयविवर्जितम्।
अन्तर्मुखं तु यद्ध्यानं तच्छुक्लं योगिनो विदुः ।।४२।।

(रोला)

अरे इन्द्रियों से अतीत अन्तर्मुख निष्क्रिय।
ध्यान-ध्येय के जल्पजाल से पार ध्यान जो।
अरे विकल्पातीत आतमा की अनुभूति।
ही है शुक्लध्यान योगिजन ऐसा कहते।। ४२।।

जो ध्यान निष्क्रिय है, इन्द्रियातीत है, ध्यानध्येय-विवर्जित (अर्थात् ध्यान और ध्येय के विकल्पों रहित) है और अन्तर्मुख है; उस ध्यान को योगी शुक्लध्यान कहते हैं।

इस श्लोक में शुक्लध्यान की व्याख्या करते हैं। कैसा है शुक्लध्यान? राग और भेद की क्रिया से रहित है, इन्द्रियों से अतीत है अर्थात् जिसमें

किसी भी इन्द्रिय की अपेक्षा अथवा सहायता नहीं है, तथा वह ध्यान और ध्येय के विकल्प से रहित है।

'मैं ध्यान करता हूँ और पूर्णस्वरूप मेरा ध्येय है' - ऐसे ध्यान और ध्येय का भेद भी जहाँ नहीं है। इस ध्यान में बहिर्मुख वृत्ति का नाश होकर अन्तर्मुखवृत्ति प्रगट हुई है। इस अन्तरस्वरूप की ओर झुकी हुई वृत्ति को एकाग्रता को शुक्लध्यान कहते हैं।

ध्यान को निष्क्रिय कहा है अर्थात् वह राग और भेद की क्रिया से रहित है; तथापि स्वपरिणति की अपेक्षा से सक्रिय है, पर्याय है। अबुद्धिपूर्वक राग श्रेणी में वर्त्तता है, वह राग शुक्लध्यान नहीं है; उससे रहित स्वरूप की एकाग्रता को परमयोगी शुक्लध्यान कहते हैं।

(अब इस ८९वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज दो श्लोक कहते हैं :-)

(वसंततिलका)

ध्यानावलीमपि च शुद्धनयो न वक्ति
व्यक्तं सदाशिवमये परमात्मतत्त्वे।
सास्तीत्युवाच सततं व्यवहारमार्ग-
स्तत्त्वं जिनेन्द्र तदहो महदिन्द्रजालम् ।।११९।।

(रोला)

सदा प्रगट कल्याणरूप परमात्मतत्त्व में।
ध्यानावलि है कभी कहे न परमशुद्धनय।।
ऐसा तो व्यवहारमार्ग में ही कहते हैं।
हे जिनवर यह तो सब अद्भुत इन्द्रजाल है।।११९।।

प्रगटरूप से सदाशिवमय (-निरन्तर कल्याणमय) ऐसे परमात्मतत्त्व में ध्यानावली[१] होना भी शुद्धनय नहीं कहता। ''वह है (अर्थात् ध्यानावली आत्मा में है)'' ऐसा (मात्र) व्यवहारमार्ग में सतत कहा है। हे जिनेन्द्र!

ऐसा वह तत्त्व (-तूने नय द्वारा कहा हुआ वस्तुस्वरूप), अहो! महा इन्द्रजाल है।

शुद्धनय ध्यान की निर्मलपर्याय को भी स्वीकार नहीं करता, वह तो मात्र अनादि-अनन्त एकरूप शुद्ध परमात्मतत्त्व को स्वीकार करता है।

शुद्धज्ञानानन्द ध्रुव आत्मा का भान करके उसमें एकाग्र होना प्रतिक्रमण है। शरीर, मन, वाणी तो जड़ हैं, आत्मा में उनका अभाव है। पुण्य-पाप के विकारीभाव भी आत्मा के वास्तविक स्वरूप नहीं हैं। विकाररहित ध्रुव चिदानन्द आत्मा की श्रद्धा व ज्ञान करने से सम्यग्दर्शन प्रकट होता है, चारित्र प्रकट होता है और ध्यान की पर्याय प्रकट होती है। वह पर्याय भी कल्याणमय परमात्मतत्त्व में नहीं है। देखो, इसमें सम्यग्दर्शन का ध्येय बताया है। सम्यग्दर्शन अथवा शुद्धनय किसे स्वीकार करता है, यह बताया है। यहाँ बहुत अद्‌भुत बात बताई है। पर का तो आत्मा कुछ कर ही नहीं सकता, पुण्य-पाप के विकारी भाव भी करने योग्य नहीं हैं; इतना ही नहीं, आत्मा के आश्रय से प्रकट होनेवाली वीतरागी पर्याय, प्रतिक्रमण की पर्याय, ध्यान की श्रेणी, धर्मध्यान व शुक्लध्यान भी शुद्धनय का विषय नहीं है; क्योंकि वे पर्यायें नवीन प्रकट होती हैं और एकसमय की अवस्थायें हैं। शुद्धनय का विषय तो त्रिकाली परमात्मा है, जो अनादि-अनन्त शुद्ध है। वह ही सम्यग्दर्शन का विषय है। **(क्रमशः)**

आत्मा के अनन्त गुणों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण श्रद्धा है। शेष समस्त गुण तो श्रद्धा का अनुसरण करते हैं। एक प्रकार से रुचि श्रद्धा का ही दूसरा नाम है। परपदार्थों से भिन्न अपनी आत्मा की रुचि ही सम्यक्-श्रद्धा है और निजात्मा से भिन्न परपदार्थों की रुचि ही मिथ्या-श्रद्धा।

बल रुचि का अनुसरण करता है; अतः बल वहीं पड़ता है, जहाँ रुचि होती है। अनन्त गुणों का बल उसी दिशा में कार्य करता है, जहाँ रुचि हो। यही कारण है कि आत्मरुचिवान व्यक्ति आत्मोन्मुखी हो जाता है और पर-रुचि वाला परोन्मुखी। **– चिन्तन की गहराईयाँ, पृष्ठ 12**

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

सुख शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

अनाकुलत्वलक्षणा सुखशक्तिः।

''अनाकुलता जिसका लक्षण है - ऐसी सुखशक्ति'' जैसे आत्मा में जीव के जीवनरूप जीवत्वशक्ति है; उसीप्रकार **एक अतीन्द्रिय-आनन्दशक्ति है।**

आनन्दशक्ति आत्मा के **अनाकुल आनन्दस्वभावमय है।** आत्मा त्रिकाल सच्चिदानन्द प्रभु है।

तात्पर्य यह है कि उसमें चिदानन्दशक्ति त्रिकाल शाश्वत पड़ी है। त्रिकाली ध्रुव आत्मद्रव्य अन्दर में पूर्ण आनन्द-स्वभाव से भरा हुआ है, उसके सन्मुख दृष्टि करके अन्तर्मुख परिणमने पर आनन्दशक्ति उछलती है। अतीन्द्रिय-आनन्द का वेदन करनेवाली अनाकुलदशा प्रगट होती है।

इसी ग्रन्थ (समयसार) की गाथा नं. ५ में आचार्यदेव ने इस आनन्द शक्ति का कार्य इसप्रकार कहा है -

''निरन्तर झरता हुआ-स्वाद में आता हुआ, जो सुन्दर आनन्द है; उसकी मुद्रा से युक्त प्रचुर स्व-संवेदनस्वरूप स्वसंवेदन से निजवैभव का जन्म हुआ है।''

अहो! आत्मा आनन्दशक्ति से पूर्ण भरा हुआ है तथा आचार्यदेव को उसकी व्यक्त दशा भी प्रगट हुई है।

सुखशक्ति त्रिकाल अनाकुलता लक्षणस्वरूप है। एक समय की वर्तमान

दशा में जो आकुलता है/दुःख है, वह गौण है। **त्रिकाली ध्रुव नित्यानन्द-स्वरूप आत्मा अनाकुलता लक्षणस्वरूप है। ''मैं कुछ करूँ'' – ऐसी वृत्ति ही आकुलता है,** जो शुभाशुभ कर्तृत्व आदि के विकल्प उठते हैं, वे सभी आकुलतारूप हैं।

मुझे तो कुछ करना ही नहीं, ज्ञान भी नहीं करना; क्योंकि जो होता है, उसे करना क्या?

अहाहा... ! सर्व विकल्पों से रहित, **कुछ भी करने के भाव से रहित निर्भारता/अनाकुलता ही सुखशक्ति का लक्षण है।** उसका कार्य भी **अनाकुल आनन्दमय** है। **उसका स्वाद भगवान सिद्ध के सुख जैसा होता है।**

४७ शक्तियों के अधिकार में श्रद्धा और चारित्र – इन दोनों शक्तियों का अलग से वर्णन नहीं किया, उन दोनों को इस सुखशक्ति में ही समाहित जानना चाहिये।

सुखशक्ति के समान आत्मा में श्रद्धाशक्ति भी त्रिकाल है। 'मैं ज्ञानानन्दमय त्रिकाली ध्रुवद्रव्य हूँ' – ऐसी प्रतीति/श्रद्धा होना ही श्रद्धाशक्ति का कार्य है, सम्यग्दर्शनरूप होना यह श्रद्धाशक्ति का कार्य है।

इस श्रद्धाशक्ति के प्रगट होते ही तत्काल नियम से अनाकुल आनन्द के संवेदनरूप सुखशक्ति के द्वारा श्रद्धाशक्ति तथा उसका कार्य प्रगट हुआ समझा जा सकता है। इसप्रकार आचार्यदेव ने सुखशक्ति में श्रद्धाशक्ति को गर्भित कर दिया है।

श्रद्धा और चारित्र तो मूल चीज है, सैंतालीस शक्तियों में इन दोनों का वर्णन नहीं है, इससे वे हैं ही नहीं – ऐसा नहीं समझना; यहाँ इन दोनों शक्तियों को सुखशक्ति में समाहित जानना चाहिए।

श्रद्धाशक्ति के समान चारित्रशक्ति भी त्रिकाल है। वह चारित्रशक्ति ध्रुवद्रव्य के उग्र अवलम्बन से प्रगट होती है। ऐसी क्रमवर्ती चारित्र की जो वीतरागी दशा प्रगट होती है, उसके साथ नियम से अनाकुल-आनन्द की

भी प्रचुरतर दशा अनुभव में आती है। इसतरह **अनाकुल शक्ति के कार्य द्वारा चारित्रगुण की दशा समझ सकते हैं।**

आहाहा....! स्व-स्वरूप के आश्रय से स्वरूपरमणता/आत्मानुभव होने पर महावैराग्य/वीतरागता सहित अनुपम-अनाकुल-आल्हाद जनक सुख की दशा प्रगट होती है।

अरे! अज्ञानी जीव ऐसी चारित्रदशा को कष्टदायक मानता है; इसीलिए तो कविवर दौलतरामजी ने छहढाला में कहा है –

आतम हित हेतु विराग ज्ञान, ते लखैं आपको कष्टदान।

भाई! एक बार सुन तो सही! अन्दर त्रिलोकीनाथ भगवान सच्चिदानन्द प्रभु अनन्तशक्तियों का सागर लहरा रहा है। उसकी प्रत्येक शक्ति में अनन्त शक्तियों का रूप है। प्रत्येक शक्ति में अनन्त शक्तियाँ व्यापक हैं।

अहा! ऐसे अनन्त शक्तिमय भगवान आत्मा को जब पर्याय अन्दर में झुककर देखती है, श्रद्धा करती है, उसमें रमती है; तब प्रचुर आनन्द की/महाआनन्द की पर्याय प्रगट होती है। इसतरह यहाँ सुखशक्ति में श्रद्धा और चारित्र दोनों को समाहित कर लिया है।

भाई! **सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र प्रगट हों और आनन्द न आवे – ऐसी वस्तुस्थिति नहीं है;** क्योंकि ज्ञानमात्र भाव में अनन्त शक्तियाँ एकसाथ उछलती हैं। इसलिए तो **''सर्वगुणांश ते समकित'' – ऐसा कहा है।**

कोई कहता है कि हमें सम्यक्त्व तो हुआ है, मगर अनाकुल-आनन्द/आल्हाद प्रगट नहीं हुआ है, उसकी यह बात झूठ है अर्थात् उसे समकित ही नहीं हुआ, वह तो अज्ञानी ही है।

बहुत से जैनाभासी ऐसा मानते हैं कि हमें समकित तो है, अब व्रत ले लें, तो चारित्र भी हो जायेगा; परन्तु उनकी यह मान्यता ही एकदम

झूठी है; क्योंकि **अनाकुल-आनन्द की दशा प्रगट होने पर ही समकित होता है, कुलपद्धति से समकित नहीं होता।**

संप्रदाय में हमारा गुरुभाई कहता था कि अपन जैनकुल में जन्मे हैं, इसलिए समकित तो गणधरदेव जैसा ही हुआ है।

अरे भगवान! समकित क्या वस्तु है? इसकी अभी तुझे खबर नहीं है। **अन्दर पूर्णानन्द का नाथ सच्चिदानन्द प्रभु त्रिकाल विराज रहा है, उसकी रुचि/प्रतीति/श्रद्धा का नाम सम्यग्दर्शन है और वह स्वानुभूति की दशा में ही प्रगट होता है।** यही समकित धर्म का मूल है।

समकित क्या चीज है, अभी जो यह भी जानता, वह उसका पुरुषार्थ कैसे करेगा? और समकित बिना चारित्रदशा प्रगट कैसे होगी? धार्मिक वर्ग में आनेवाले सब अच्छी तरह से जानते हैं कि समकित और चारित्र क्या चीज है; क्योंकि लोक में एकमात्र यही सारभूत और हितकारी है, इसके बिना अन्य कुछ भी हितकारी नहीं है; कहा भी है -

तीन लोक तिहुँ काल मांहि नहिं दर्शन सो सुखकारी।
सकल धर्म को मूल यही इस बिन करनी दुःखकारी॥

भाई! सम्यग्दर्शन की पर्याय में पूरा त्रिकाली आत्मद्रव्य नहीं आता, परन्तु पूर्णानन्दस्वभावी द्रव्य की पूर्ण सामर्थ्य की प्रतीति होते ही निर्मल रत्नत्रय का मार्ग खुल जाता है।

अहा.....! सम्यग्दर्शन सहित चौथे, पाँचवें, छट्ठे गुणस्थानवर्ती सभी आत्मायें **शिवमगचारी हैं।** छहढाला में भी कहा है -

मध्यम अन्तर-आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी।
जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिवमगचारी॥

चौथे गुणस्थानवर्ती अविरत सम्यग्दृष्टि को मुक्तिमार्ग में गमन शुरू करने की अपेक्षा शिवमगचारी कहा है। **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : भेदभक्ति और अभेदभक्ति अथवा व्यवहारभक्ति और निश्चयभक्ति का स्वरूप क्या है एवं उसका क्या फल है ?

उत्तर : परमात्मा के स्वरूप का विचार करना भेदभक्ति है, वह प्रथम होती है। ऐसी भेदभक्ति को जानने के पश्चात् ऐसा ही परमात्मा मैं हूँ, आत्मा में ही परमात्मा होने की शक्ति है - इसप्रकार अपने आत्मा को पहिचानकर उसमें स्थिर होना परमार्थभक्ति अथवा अभेदभक्ति अथवा निश्चयभक्ति है। अभेद आत्मा की तरफ बढ़ने के लक्षपूर्वक जो भेदभक्ति होती है, वह व्यवहार कहलाती है। रागरहित ज्ञानस्वरूपी आत्मा का श्रद्धान-ज्ञान करके उसके ध्यान में एकाग्रतारूप अभेदभक्ति तो मोक्षफल दायक है, इसके विपरीत भेदभक्ति बंधफलदायक है।

प्रश्न : अभेदभक्ति कितने प्रकार की होती है । क्या सभी प्रकार की भक्ति स्त्रियों को हो सकती है ?

उत्तर : अभेदभक्ति दो प्रकार की होती है - (1) शुक्लध्यान (2) धर्मध्यान। यद्यपि कहने में तो दोनों जुदा (भिन्न) लगते हैं; परन्तु इन दोनों के अवलम्बनस्वरूप आत्मा एक ही है, इसलिये ये दोनों एक ही जाति के हैं, मात्र निर्मलता की अधिकता और हीनता का ही अन्तर है। आत्मस्वभाव के भान द्वारा धर्मध्यान स्त्रियों को भी हो सकता है; परन्तु उन्हें शुक्लध्यान नहीं हो सकता; क्योंकि धर्मध्यान की अपेक्षा शुक्लध्यान विशेष निर्मल है और ऐसी विशेष निर्मलता स्त्रीपर्याय में स्वाभाविकरूप से सम्भव नहीं है।

प्रश्न : कोई किसी का बहुमान नहीं कर सकता - ऐसा मानने में तो तीर्थंकर का अविनय हो जावेगा?

उत्तर : तीर्थंकर का अविनय किसे कहते हैं ? तीर्थंकर भगवान तो वीतराग हैं। वास्तव में तो राग से उनका विनय नहीं होता। जैसा तीर्थंकर प्रभु ने स्वयं किया और कहा, वैसा ही समझना और भगवान चैतन्य ज्योति का बहुमान करके उसमें ठहरना - यही तीर्थंकर का सच्चा विनय है। सत् समझने से विनय का अभाव नहीं होता; अपितु सत् की सच्ची भक्ति और सच्चा विनय होता है।

पहले अज्ञानदशा में कुदेवादि के समक्ष मस्तक झुकाता रहा। अब सच्ची समझ होने पर जबतक स्वयं वीतराग नहीं हो जाता, तबतक बीच में सत् निमित्तों का विनय, भक्ति, बहुमान आये बिना नहीं रहता; परन्तु वहाँ भी परमार्थ से पर का बहुमान नहीं, अपने भाव का ही बहुमान है। ज्ञानी तो अपने स्वभाव को ही सर्वोत्कृष्ट जानकर उसी का आदर करते हैं; क्योंकि स्वभाव के आदर में ही तीर्थंकर का सच्चा विनय समाहित है।

प्रश्न : श्री परमात्मप्रकाश ग्रंथ की पंद्रहवीं गाथा में कहा है कि भावकर्म, द्रव्यकर्म और देहादिक सर्व परद्रव्यों को छोड़कर केवलज्ञानमय परमात्मपना प्राप्त किया; अत: यहाँ प्रश्न है कि अरिहन्तदेव ने भावकर्म, द्रव्यकर्म का अभाव किया - यह तो ठीक; परन्तु उनके देहादिक का भी अभाव हो गया - ऐसा कैसे कहा? शरीर का संयोग तो उनके अभी मौजूद है ?

उत्तर : शरीरादिक तो तीनों काल आत्मा से भिन्न ही हैं; परन्तु पहले उनके प्रति मोह और राग-द्वेष था, उस मोह और राग-द्वेष का अभाव हो गया; इसलिये शरीरादि का भी अभाव हो गया - ऐसा कहने में आया है।

प्रश्न : शास्त्रपठन का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर : शास्त्रों का तात्पर्य तो भिन्नवस्तुभूत ज्ञानमय आत्मा बतलाना है। ऐसे आत्मा का ज्ञान होना ही शास्त्र पढ़ने का तात्पर्य है। जो जीव ऐसे आत्मा को नहीं जानते, उन्होंने वास्तव में शास्त्र पढ़ा ही नहीं। ज्ञानस्वभावी आत्मा राग से भी भिन्न है - ऐसा बतलाकर शास्त्र ज्ञानस्वभाव का ही अवलम्बन कराते हैं और राग का अवलम्बन छुड़ातें हैं - यही शास्त्र का

तात्पर्य है, यही शास्त्र पढ़ने का गुण है। जिसके भिन्नवस्तुभूत शुद्धज्ञानस्वभावी आत्मा के ज्ञान का अभाव है, उसको शास्त्र के पठन के फल का भी अभाव है अर्थात् वह अज्ञानी है; अत: राग से पार शुद्ध ज्ञानमय आत्मा का स्वरूप जानकर उसका आश्रय करना योग्य है।

प्रश्न : क्या शास्त्रों का अर्थ भी अनेक तरह से किया जाता है ?

उत्तर : अक्षरार्थ, भावार्थ आदि पाँच प्रकार से शास्त्रों का अर्थ करने को आचार्यदेव ने कहा है।

जैसे ज्ञानावरणी कर्म से ज्ञान रुकता है - यह तो अक्षरार्थ हुआ। ज्ञानावरणी कर्म से ज्ञान नहीं रुकता, परन्तु अपने ही कारण ज्ञान अल्प (हीन) हुआ है - यह भावार्थ हुआ। पर के कारण ज्ञान अल्प हुआ है - ऐसा माननेवाले की तो दृष्टि ही मिथ्या है। परन्तु ज्ञान अपने ही कारण हीन है - ऐसा जानना सत्य है। ऐसा जानकर भी हीन पर्याय का लक्ष छोड़कर त्रिकालीध्रुव चैतन्यसामान्य का लक्ष करना भावार्थ है। यही जानने का प्रयोजन है।

नियमसार में आत्मा को चार भावों से अगोचर कहा है अर्थात् क्षायिक-भाव से आत्मा जानने में नहीं आता - यह अक्षरार्थ है। यह अक्षरार्थ भी भावार्थ से ही सफल है। इसका भावार्थ यह है कि क्षायिक भाव के आश्रय से आत्मा ज्ञात नहीं होता, इसलिये आश्रय की अपेक्षा से क्षायिकभाव से अगोचर कहा है। आत्मा को जाननेवाली तो निर्मल पर्याय ही है, तथापि उसके आश्रय से त्रिकाली आत्मा जानने में नहीं आता।

नियमसार (भक्ति अधिकार) में दर्शन-ज्ञान-चारित्र के परिणाम का भजन वह भक्ति है - ऐसा कहा है, वह व्यवहार नय से कहा है; परन्तु उसका भावार्थ धर्मी जीव ध्रुव आत्मा की ही भक्ति-सेवा-उपासना करता है - ऐसा समझना। समयसार की 16 वीं गाथा में कहा है कि दर्शन-ज्ञान-चारित्र सदा सेवन करने योग्य है। वह व्यवहार से समझाया है, परमार्थ में तो एकरूप ध्रुव आत्मा का ही सेवन करना है। व्यवहार से समझाया जाता है, तथापि

समझने और समझानेवाले को व्यवहार में स्थित नहीं रहना है। समयसार की 8 वीं गाथा की टीका में भी ऐसा ही कहा है कि ... व्यवहारनय भी म्लेच्छ भाषा के स्थान में होने के कारण परमार्थ का प्रतिपादक (कहनेवाला) होने से स्थापन करने योग्य है; तथापि ब्राह्मण को म्लेच्छ नहीं होना - इस वचन से वह (व्यवहारनय) अनुसरण करने योग्य नहीं है। जहाँ-जहाँ शुद्ध पर्याय की सेवा करने को -ध्यान करने को कहा है, वहाँ-वहाँ उसे समझाने की एकप्रकार की शैली के कथन समझना चाहिये। निर्मल पर्याय प्रकट होती है - इस अपेक्षा से कहा है - ऐसा समझना।

समयसार की 6 वीं गाथा की टीका में कहा है कि आत्मा अन्य द्रव्य -भावों से भिन्नरूप उपासना किये जाने से शुद्ध कहलाता है; वहाँ ऐसा समझना चाहिये कि अन्यद्रव्य से लक्ष छूटता है और स्वद्रव्य पर लक्ष जाता है, तब पर्याय भी गौण हो जाती है और अकेले ध्रुव द्रव्यस्वभाव पर लक्ष जाता है - यही द्रव्य की सेवा कही जाती है। ●

हार्दिक बधाई!

जयपुर (राज.) : यहाँ बापूनगर स्थित राजकीय महाराज आचार्य संस्कृत महाविद्यालय में दिनांक 19 सितम्बर को हिन्दी दिवस के अवसर पर आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के अन्तर्गत काव्यपाठ प्रतियोगिता में प्रथम स्थान **अतिशय जैन चौरई** (शास्त्री द्वितीयवर्ष) व द्वितीय स्थान **समकित जैन ईसागढ** (शास्त्री प्रथमवर्ष) एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता (पक्ष) में प्रथम स्थान **संयम जैन तिगौड़ा** (शास्त्री द्वितीयवर्ष) तथा विपक्ष में प्रथम स्थान **आप्तअनुशील जैन दमोह** (शास्त्री द्वितीयवर्ष) ने प्राप्त किया।

इस उपलब्धि हेतु टोडरमल महाविद्यालय एवं वीतराग-विज्ञान परिवार की ओर से हार्दिक बधाई!

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

25 से 29 अक्टूबर	**देवलाली**	**दीपावली**
1 से 3 नवम्बर	**इन्दौर (ढाईद्वीप)**	**वेदी शिलान्यास**
4 से 11 नवम्बर	**कोलकाता**	**अष्टाह्निका महापर्व**

समाचार दर्शन -

22वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सम्पन्न

जयपुर (राज.) : पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 13 से 20 अक्टूबर तक जिनागम के 22 विषयों का व्यवस्थित अध्ययन कराने वाला 22वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर अनेक मांगलिक आयोजनों सहित संपन्न हुआ।

उद्घाटन समारोह - दिनांक 5 अक्टूबर को शिविर के उद्घाटन समारोह के अवसर पर आयोजित सभा में मुख्य अतिथि के रूप में श्री दिनेशजी तातेड़, जयपुर उपस्थित थे। विद्वानों के अन्तर्गत तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल आदि अनेक विद्वान उपस्थित थे।

शिविर का उद्घाटन सभा के अध्यक्ष श्री रमेशभाई शाह अहमदाबाद (अध्यक्ष-वस्त्रापुर मंदिर), ध्वजारोहण श्री निहालचंदजी घेवरचंदजी जैन जयपुर, प्रवचन मण्डप का उद्घाटन श्री सेवन्तीभाई गांधी अहमदाबाद, मंच उद्घाटन श्री शान्तिलालजी चौधरी भीलवाड़ा द्वारा संपन्न हुआ। इसके अतिरिक्त पण्डित टोडरमलजी के चित्र अनावरणकर्त्ता श्री ऋषभभाई शास्त्री अहमदाबाद एवं गुरुदेवश्री के चित्र अनावरणकर्त्ता श्री सुरेशभाई ए.शाह अहमदाबाद थे। आगन्तुक विद्वानों व महानुभावों का श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, जयपुर द्वारा तिलक लगाकर माल्यार्पणकर स्वागत किया गया।

इस अवसर पर श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा, श्री दिनेशजी तातेड़, श्री सुरेशभाई ए.शाह अहमदाबाद आदि महानुभावों ने अपने मनोभाव व्यक्त किये। सभा का संचालन ट्रस्ट के कार्यकारी महामंत्री श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने किया। अन्त में डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा मार्मिक प्रवचन का लाभ मिला।

प्रवचन - शिविर में प्रतिदिन प्रात:काल पूज्य गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनों के पश्चात् ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा 'तत्त्वचिंतन' विषय पर मार्मिक प्रवचन हुये। रात्रिकालीन प्रवचनों में प्रतिदिन ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा 'पंचाध्यायी के नय' विषय पर हुये प्रवचनों के पूर्व पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर, पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा, डॉ. प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा के व्याख्यानों का लाभ मिला।

पूजन विधान - प्रात:काल नित्य-नियम पूजन के साथ-साथ श्री नियमसार विधान एवं सायंकाल जिनेन्द्र-भक्ति का आयोजन किया गया। विधि-विधान के समस्त कार्य डॉ. शांतिकुमारजी पाटील के निर्देशन में पण्डित जिनेन्द्रजी शास्त्री व पण्डित रूपेन्द्रजी शास्त्री द्वारा

आयुष शास्त्री, सहज शास्त्री एवं संयम देशमाने के सहयोग से संपन्न हुये। विधान के आमंत्रणकर्ता श्रीमती शकुन्तला धर्मपत्नी डॉ. के.एल. जैन एवं पुत्र-पुत्रवधु विक्रान्त-रेशू जैन, जयपुर थे।

शिक्षण कक्षायें – ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा सामान्य श्रावकाचार, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली द्वारा प्रवचनसार (ज्ञानाधिकार) व मोक्षमार्गप्रकाशक (सात तत्त्व संबंधी भूल), डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली द्वारा सर्वज्ञसिद्धि व न्यायदीपिका, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा प्रमाण का प्रामाण्य व समयसार में उपयोग की चर्चा, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा नैगमादि सप्त नय व तीन लोक, डॉ. नरेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर द्वारा प्रमाण का विषय व फल तथा क्रमबद्धपर्याय, डॉ. योगेशजी शास्त्री अलीगंज द्वारा परीक्षामुख व सप्तभंगी, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा द्वारा द्रव्यसंग्रह एवं मिथ्याचारित्र का स्वरूप, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा द्वारा 14 गुणस्थान व कर्मसिद्धांत, पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री द्वारा समाधि और सल्लेखना, पण्डित अच्युतकांतजी शास्त्री जयपुर द्वारा निमित्त-उपादान, पण्डित चर्चितजी शास्त्री द्वारा देव-शास्त्र-गुरु का स्वरूप विषय पर कक्षाओं का लाभ मिला।

प्रात: 5.30 बजे पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित सिद्धार्थजी दोशी रतलाम एवं पण्डित निखिलजी शास्त्री मुम्बई की प्रौढ कक्षा के पश्चात् जिनवाणी चैनल पर डॉ.भारिल्ल के प्रवचनों का प्रसारण प्रवचन हॉल में ही बड़े पर्दे पर किया जाता था।

शिविर के आमंत्रणकर्ता श्रीमती सुनीता-प्रेमचंद बजाज एवं सुपुत्र तन्मय-ध्याता बजाज, कोटा और श्राविकारत्न स्व. श्रीमती कंचनदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री धर्मचंदजी दीवान सुपुत्र श्री विद्याप्रकाश-संजयकुमार-अजय छाबड़ा एवं समस्त दीवान परिवार सूरत (सीकर वाले) थे।

शिविर में 22 विद्वानों के माध्यम से लगभग 500 साधर्मियों ने प्रतिदिन 16 घंटे तक चलने वाले तत्त्वज्ञान के कार्यक्रमों का लाभ लिया। इस अवसर पर हजारों घंटों के सी.डी./डी.वी.डी. प्रवचन तथा हजारों रुपयों का सत्साहित्य घर-घर पहुंचा। ●

शिविर का समापन एवं पुरस्कार वितरण

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में 22वें आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह **डॉ. हुकमंचदजी भारिल्ल** की अध्यक्षता में दिनांक 20 अक्टूबर की रात्रि में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम में समस्त विद्वत्गण व अध्यापकगणों के अतिरिक्त श्री त्रिलोकचंदजी भरतपुर, पण्डित मनोजजी मुजफ्फरनगर, श्री जनीशजी सनावद, श्री सत्येन्द्रजी जयपुर, श्री प्रेमचंदजी दौसा, श्री ताराचंदजी सौगानी जयपुर, श्री किरणभाई गाला मुम्बई, श्री अनेकान्तजी भारिल्ल, श्रीमती कमला भारिल्ल, श्रीमती गुणमाला भारिल्ल, श्रीमती संस्कृति गोधा, श्रीमती शशि

जयपुर, श्रीमती विमला जयपुर आदि महानुभाव उपस्थित थे। सभा में डॉ. शांतिकुमारजी पाटील, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा, डॉ. दीपकजी वैद्य, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने अपने विचार व्यक्त किये। तत्पश्चात् सफल विद्यार्थियों को नकद राशि एवं प्रमाण-पत्र देकर पुरस्कृत किया गया।

इस अवसर पर संयम जैन गुढाचन्द्रजी, संयम जैन मड़देवरा, निखिल जैन फिरोजाबाद ने महाविद्यालय एवं शिविर संबंधी काव्यपाठ कर अपने मनोभाव व्यक्त किये। इसके अतिरिक्त प्रजल जैन खनियांधाना व आयुष जैन गौरझामर ने डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा का चित्र (स्कैच) बनाकर भेंट किया। कार्यक्रम में दुर्लभ जैन गुढाचन्द्रजी, संयम जैन दिल्ली, पवित्र जैन आगरा, शाश्वत जैन भोपाल, उमंग जैन अमरमऊ, आकाश जैन बेलगांव आदि छात्रों ने शिविर संबंधी अपने अनुभव सुनाये।

अन्त में डॉ. भारिल्ल ने दीक्षान्त भाषण में कहा कि देश के विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ अध्यापकों का लाभ सभी महाविद्यालय के छात्रों को मिलना चाहिये; इस उद्देश्य से यह शिविर लगाया जाता है। सभी महाविद्यालयों के छात्र एक हैं, सभी को मिलकर तत्त्वज्ञान सीखना व प्रचार-प्रसार करना है। पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री ने शिविर की रिपोर्ट एवं परीक्षा परिणाम प्रस्तुत किया। अन्तिम दिन चारों महाविद्यालयों के (जयपुर=194, बांसवाड़ा=45, कोटा=47, उदयपुर=26) कुल 312 छात्रों ने एवं 12 अन्य - इसप्रकार कुल 324 साधर्मियों ने परीक्षा दी। महाविद्यालयों में विशेष स्थान प्राप्त करने वाले छात्र इसप्रकार हैं -

उपाध्याय वर्ग में जयपुर से अरविन्द जैन खड़ैरी ने प्रथम व आदित्य जैन फुटैरा ने द्वितीय स्थान, **कोटा** से हिमेश जैन शाहगढ ने प्रथम व राहुल जैन दिल्ली ने द्वितीय स्थान, **बांसवाड़ा** से अतिशय जैन मुजफ्फरनगर ने प्रथम व अमित जैन नौगांव ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

शास्त्री प्रथम वर्ष में जयपुर से अनिमेष भारिल्ल राघौगढ ने प्रथम व स्वस्ति सेठी जयपुर ने द्वितीय स्थान, **कोटा** से वंश जैन पिड़ावा ने प्रथम व अंकित जैन कन्नपुर ने द्वितीय स्थान, **बांसवाड़ा** से अनेकान्त काले राजूरा ने प्रथम व आशीष जैन घुवारा ने द्वितीय स्थान, **उदयपुर** से सुरभि जैन मुम्बई ने प्रथम व रश्मि जैन अभाना ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

शास्त्री द्वितीय-तृतीय वर्ष में जयपुर से संयम जैन दिल्ली ने प्रथम व पवित्र जैन आगरा ने द्वितीय स्थान, **कोटा** से अभिषेक लोधी हिरावल ने प्रथम व शुभम जैन घुवारा ने द्वितीय स्थान, **बांसवाड़ा** से सुशांत चौगुले पंढरपुर ने प्रथम व सुप्रीम जैन पिड़ावा ने द्वितीय स्थान, **उदयपुर** से मयूरी जैन शाहगढ ने प्रथम व प्रियंका जैन बजरंगगढ ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

कार्यक्रम का मंगलाचरण संयम जैन देशमाने बीड, संचालन समर्थ जैन विदिशा एवं आभार प्रदर्शन जिनेन्द्रजी शास्त्री ने किया। ●

अमेरिका में धर्मप्रभावना

वर्जीनिया (अमेरिका) : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर ब्र. अभिनन्दनजी शास्त्री देवलाली द्वारा प्रात:काल पूजन एवं सायंकाल मोक्षमार्गप्रकाशक एवं रत्नकरण्डश्रावकाचार के आधार से दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त जिनेन्द्र-भक्ति का भी आयोजन हुआ। ज्ञातव्य है कि वहाँ तेरापंथी दिगम्बर जैन मंदिर निर्माणाधीन है।

– दुर्लभ जैन व गौरव जैन, यू.एस.ए.

T.V. चैनल पर डॉ. संजीव गोधा

गुजरात के प्रसिद्ध GTPL के निर्माण न्यूज TV चैनल पर अन्तरराष्ट्रीय जैन विद्वान डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर का क्षमावाणी के पावन प्रसंग पर एक 25 मिनट का इन्टरव्यू दिनांक 13 सितम्बर, 2019 को दो बार प्रसारित किया गया। इन्टरव्यू में एंकर नताशा बक्शी द्वारा पूछे गये लगभग 12-15 प्रश्नों के माध्यम से इस पर्व के महत्व एवं वर्तमान समय में इसकी प्रासंगिकता को बहुत सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया।

देश के 18 प्रांतों में अनगिनत लोगों द्वारा देखे गये इस इन्टरव्यू को हजारों लोगों ने सराहा। अब इसे YouTube के Drsanjeevgodha Channel पर Play list में विशिष्ट प्रवचनों के अन्तर्गत देखा जा सकता है। यहाँ इस चैनल पर संजीवजी के 1000 से अधिक प्रवचन उपलब्ध हैं। **– चैतन्य शास्त्री, अहमदाबाद**

डॉ. दीपकजी वैद्य द्वारा विशेष कक्षा

मंगलायतन-अलीगढ : यहाँ दिनांक 6 से 12 अक्टूबर तक टोडरमल स्मारक के वरिष्ठ अध्यापक डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर द्वारा गोम्मटसार के आधार से जैन अलौकिक गणित एवं जीव समास प्रकरणों पर विशेष कक्षा ली गई। साथ ही विदुषी श्रुति जैन द्वारा छहढाला की कक्षा ली गई। सभी छात्रों ने कक्षाओं का उत्साहपूर्वक लाभ लिया। **– सचिन्द्र जैन, मंगलायतन**

शोक समाचार

अहमदबाद (गुज.) निवासी श्री प्रभुलालजी जैन का शांत-परिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप वस्त्रापुर मंदिर सभा के नियमित स्वाध्यायी थे, सोनगढ में जाकर गुरुदेवश्री के सान्निध्य में तत्त्वज्ञान का लाभ लिया करते थे। आपकी स्मृति में श्री सुरेशचंदजी जैन, पवनजी जैन एवं जम्बूकुमार जैन की ओर से संस्था हेतु 2100/- रुपये की राशि प्राप्त हुई।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

साप्ताहिक गोष्ठी संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 22 सितम्बर को **जीव के स्वतत्त्व : पंचभाव** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता ब्र.विमलाबेन जबलपुर ने की एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में श्रीमती कमला भारिल्ल जयपुर उपस्थित थीं। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में दीपक जैन मजगुवां (उपाध्याय कनिष्ठ) तथा सिद्धांत शेट्टी उगार (शास्त्री तृतीयवर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण संयम जैन खैरागढ (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के विनम्र जैन बड़ागांव व अभय जैन देवराहा ने किया। आभार प्रदर्शन एवं ग्रंथ भेंट जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

दिनांक 29 सितम्बर को '**प्राकृत अध्ययन की आवश्यकता : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. कमलचंदजी सौगानी जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में चेतन जैन गुढाचन्द्रजी (उपाध्याय वरिष्ठ) तथा स्वस्ति सेठी जयपुर (शास्त्री प्रथमवर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण भव्य जैन उदयपुर (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के प्रजल जैन खनियांधाना व नमन जैन भरतपुर ने किया। आभार प्रदर्शन डॉ. शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 2 अक्टूबर को रात्रि में डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के प्रवचनोपरान्त पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न हुआ, जिसमें महाविद्यालय के छात्रों को शिविर-डायरी पुरस्कार, कण्ठपाठ पुरस्कार, दशलक्षण पर्व की प्रतियोगिताओं के पुरस्कार, 'ऐसे क्या पाप किये' विषय पर संपन्न झांकी पुरस्कार एवं विभिन्न पुरस्कार दिये गये।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की। मंचासीन अतिथियों में डॉ. शांतिकुमारजी पाटील, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य', पण्डित राकेशजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित प्रमोदजी शास्त्री, श्री ताराचंदजी सौगानी, श्री हीराचंदजी बैद, जिनकुमारजी शास्त्री, जिनेन्द्रजी शास्त्री, नीशूजी शास्त्री, श्रीमती गुणमाला भारिल्ल आदि उपस्थित थे।

कार्यक्रम का मंगलाचरण सहज जैन पिड़ावा (शास्त्री तृतीय वर्ष), संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के नयन जैन खनियांधाना व संयम जैन मड़देवरा ने एवं आभार प्रदर्शन गौरवजी शास्त्री ने किया।

विश्वस्तरीय सत्पथ प्रश्नमंच की घोषणा

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी के त्रिजन्मशताब्दि महोत्सव के अवसर पर सत्पथ फाउण्डेशन ने स्वाध्याय की परम्परा को विकसित करने हेतु सम्मेदशिखरजी में शिक्षण शिविर के अवसर पर 'विश्वस्तरीय सत्पथ प्रश्नमंच' की घोषणा की। इसके अग्रिम पत्र का विमोचन ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना के सान्निध्य में अनेक विद्वानों व श्रेष्ठीगणों द्वारा हजारों साधर्मियों की उपस्थिति में हुआ।

पण्डित टोडरमलजी के जीवन पर आधारित प्रश्नमंच की विस्तृत जानकारी डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर ने देते हुए कहा कि इसमें 1008 विकल्पात्मक प्रश्न होंगे व 1008 प्रतियोगियों को पुरस्कृत किया जायेगा। इसके माध्यम से ऐतिहासिक महापुरुष मनीषी टोडरमलजी एवं उनके द्वारा लिखे गये साहित्य के बारे में अधिक से अधिक लोगों को शिक्षित किया जायेगा।

कार्यक्रम का संचालन पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर ने किया।

लॉस एन्जिल्स में डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया

लॉस एन्जिल्स (अमेरिका) : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया मुम्बई द्वारा प्रात:काल अध्यात्म के नय एवं सायंकाल आत्मानुभूति के लिये आवश्यक जैन सिद्धांत विषय पर प्रवचनों का लाभ मिला। शनिवार को युवाओं के लिये विशेषरूप से 'आर्ट ऑफ हैप्पी लिविंग' नामक विशेष सेमिनार आयोजित किया गया, जिसमें जैन सिद्धांतों के प्रेक्टिकल एप्लीकेशन पर चर्चा की गई। इसके अतिरिक्त श्री अविनाशजी टडैया द्वारा ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये।

ज्ञातव्य है कि दशलक्षण पर्व के पश्चात् न्यूजर्सी (अमेरिका) में डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा अपने निजी प्रवास के दौरान साधर्मियों से तत्त्वचर्चा की गई, जिससे सभी साधर्मीजन अत्यंत प्रभावित हुये एवं ऑनलाइन तत्त्वचर्चा करने की भावना व्यक्त की।

प्रशिक्षण शिविर की घोषणा

सम्मेदशिखरजी में संपन्न निजात्म केलि शिविर के अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा ग्रीष्मकाल के दौरान आयोजित होने वाले शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर के अहमदाबाद में आयोजन की घोषणा श्री रमेशभाई शाह और श्री अजितभाई मेहता ने बहुत हर्षोल्लास के साथ की। श्री सेवन्तीभाई गांधी ने बताया कि यह शिविर दिनांक 17 मई से 3 जून 2020 तक आयोजित किया जायेगा। इस अवसर पर ब्र. सुमतप्रकाशजी तथा डॉ. संजीवजी गोधा द्वारा शिविर के महत्व पर प्रकाश डाला गया।

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2018-20*

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन का विहंगम दृश्य

प्रकाशन तिथि : 22 अक्टूबर 2019

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.

सह-सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.

द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**